

भारतीय लोकतंत्र के समक्ष मौजूदा चुनौतियां एवं हमारे नागरिक कर्तव्य

डॉ.रमेश चंद बैरवा

सह आचार्य,राजनीति विज्ञान

बाबू शोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय,अलवर

भारत में संविधान सम्मत लोकतंत्र की ऐतिहासिक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि क्या है? 15 अगस्त 1947 को राजनैतिक आजादी के बाद भारत में राज्य एवं लोकतंत्र का स्वरूप क्या रहा है? 75 साल के स्वतंत्र भारत में जनता के हालात कैसे हैं? भारत में लोकतंत्र और संविधान के समक्ष वर्तमान प्रमुख चुनौतियां कौन-कौन सी हैं? लोकतंत्र ही संकट में नहीं है,बल्कि संविधान पर भी खतरे मंडरा रहे हैं...ऐसे में हमारे नागरिक कर्तव्य क्या हैं?...लोकतंत्र और संविधान को बचाने के लिए हमारे एजेंडे के मुद्दे क्या हो...हमारी रणनीति क्या हो? इन्हीं सवाल और मुद्दों पर केंद्रित है यह लेख। स्वतंत्र भारत में शासन चलाने के लिए शासकों ने उदार- लोकतांत्रिक,लोककल्याणकारी पूंजीवादी राज्य के स्वरूप को अपनाया था जिसको कानूनी जामा हमारे संविधान ने पहनाया। इसके प्रमुख कारण थे:

1. "The Sun Never Sets on British Empire" जैसे अति विशाल,रंगभेदी,लुटेरे ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ इस देश की जनता के राष्ट्रीय संघर्ष एवं इससे उपजी सभी के लिए रोटी,कपड़ा,मकान,शिक्षा, स्वास्थ्य सहित जाति,जेंडर आधारित सामाजिक भेदभाव एवं शोषण से मुक्ति की उम्मीदें। यह भी गौरतलब है कि देश को आजाद करवाने में मजदूर, किसान,महिला,दलित, आदिवासी,बुद्धिजीवी तबकों ने भी कुर्बानियां दी थी लेकिन इनके बारे में आमजन को सही से बताया ही नहीं गया, पाठ्यपुस्तकों में इनके बारे में पढ़ाया ही नहीं।यहां तक कि भगतसिंह,सुखदेव,राजगुरु, अशफाक,बिरसा मुंडा जैसे क्रांतिकारी शहीदों के बारे में भी नहीं पढ़ाया गया। कुछ ही नेताओं का महिमामंडन कर, गौरवगान किया गया है।फिर यह अच्छी बात है कि आजादी के आंदोलन में सक्रिय रहे,कुर्बानी देने वाले दलित,आदिवासी,अल्पसंख्यक तबकों से आए नायकों की भूमिका को इन दिनों उकेरा जा रहा है,इनके बारे में हमें जानकारी मिल रही है।

1. 2 "मुक्त बाजार,मुक्त व्यापार" (Free Market,Free Trade...Laissez faire के अर्थशास्त्र के सिद्धांतों पर संचालित,मुनाफे को ही अपना सबसे बड़ा धर्म मानने वाले पूंजीवाद का 1932 का महामंदी सहित 1930 के दशक का भीषण आंतरिक संकट तथा पूंजीवाद के इस भीषण संकट का "General Theory of Employment" जैसी प्रसिद्ध रचना के लेखक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड कीन्स के "गड्डे खुदवाओ,फिर भरवाओ" के अंदाज का राज्य हस्तक्षेप (State Intervention) के लोक कल्याणकारी राज्य के सिद्धांत के जरिए पूंजीवाद के संकट के समाधान की रणनीति,

2. 3.वर्ग,जाति,जेंडर,जनजाति, रंग,भाषा,क्षेत्र,राष्ट्र जैसे हर किस्म के मानवीय शोषण से मुक्त साम्यवादी समाज के निर्माण के लिए संघर्षरत तथा स्वाधीनता आंदोलनों के समर्थक कम्युनिस्ट आंदोलन का विश्व में तेजी से बढ़ता प्रभाव।

3. 4.हिटलर और मुसोलिनी जैसे रंगभेदी,दुर्दात, राष्ट्रवाद,देशभक्ति की आड़ में युद्ध उन्मादी इन तानाशाहों की फासीवादी सरकारों पर समाजवादी,लोकतांत्रिक शक्तियों की विजय।

4. 5.भारतीय समाज में व्याप्त आंतरिक सामंती शोषण विशेषकर जातिगत एवं जेंडर आधारित भेदभाव एवं वर्चस्व के खिलाफ महात्मा जोतिबा फुले,डॉ.अंबेडकर,परियार,शहीद भगतसिंह का विद्रोह।

संक्षेप में कहें तो शहीदों की कुर्बानी,समाज सुधारकों के विशेष प्रयासों सहित आजादी के आंदोलन से उपजी आमजन की उम्मीद की पृष्ठभूमि में भारत का संविधान बना। संविधान कैसा हो,इसका उद्देश्य प्रस्ताव संविधान सभा में 13 दिसंबर,1946 को जवाहरलाल नेहरू ने रखा,जो संविधान के निर्माण के लिए मार्गदर्शक बना। इसी उद्देश्य प्रस्ताव ने मोटे तौर पर 'भारत के संविधान की प्रस्तावना' का रूप ले लिया। इसी उद्देश्य प्रस्ताव में वंचित तबकों के लिए विशेष प्रावधान का उल्लेख भी है।

संविधान निर्माण में डॉ.अम्बेडकर की विशेष भूमिका

29 अगस्त 1947 को बाबा साहेब डॉ.अम्बेडकर को संविधान की प्रारूप समिति का सभापति बनाया। 2 वर्ष 11 माह 17 दिन में संविधान बनकर तैयार हुआ, जिसे संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ.राजेंद्र प्रसाद के हस्ताक्षर के साथ 26 नवंबर 1949 को अपना लिया गया। जो 26 जनवरी 1950 को पूर्णतः लागू हुआ। सभी जानते हैं कि संविधान निर्माण में डॉ.अम्बेडकर की भूमिका बहुत ही अहम रही है। संविधान सभा के राजनैतिक सलाहकार वी.एन.राव द्वारा तैयार किये गये संविधान के प्रारूप पर विचार-विमर्श करने के लिए संविधान सभा द्वारा 29 अगस्त, 1947 को एक संकल्प पास करके सात सदस्यीय प्रारूप समिति का गठन किया गया। डॉ.भीमराव अम्बेडकर को प्रारूप समिति का सभापति चुना गया। एन.गोपाल स्वामी आयंगर, ए.के.अय्यर, के.एम.मुंशी, सैय्यद मुहम्मद सादुल्ला, ए.एम.माधव, इन्हें बी.एल.मित्र के स्थान पर एवं डी.पी.खेतान की मृत्यु के बाद टी.टी. कृष्णामाचारी को सदस्य बनाया गया। खास बात यह है कि समिति के एक सदस्य अमेरिका चले गए। एक का देहांत हो गया। एक ने त्यागपत्र दे दिया। एक रियासतों के कामकाज में व्यस्त रहे और एक अस्वस्थ रहे। परिणामस्वरूप डा.अम्बेडकर को सारा काम अकेले करना पड़ा।

भारतीय संविधान के निर्माण में डॉ.अम्बेडकर की अहम भूमिका के बारे में यहां इतना जिक्र करना ही पर्याप्त होगा कि 25 नवंबर 1949 को संविधान तैयार हो जाने के बाद डॉ.अम्बेडकर ने संविधान सभा में अपना समापन भाषण दिया जो ऐतिहासिक भाषण था, जिसमें संविधान एवं लोकतंत्र के लिए आसन्न चुनौतियों का जिक्र है। भारत के संविधान ने आजाद भारत में लोक कल्याणकारी राज्य के लिए कानूनी आधार रखा। आर्थिक क्षेत्र में मिश्रित अर्थव्यवस्था के नियोजित मॉडल को अपनाया गया, जिसका समर्थन देश के पूंजीपतियों ने बहुत पहले ही 1944 के मुंबई प्लान के जरिए ही कर दिया था। सिर्फ डॉ.अम्बेडकर की ही मानें तो इस देश के मेहनतकश, शोषित, वंचित तबकों की सामाजिक एवं आर्थिक शोषण से समग्र मुक्ति के लिए पूंजीवाद और ब्राह्मणवाद के स्थान पर जातिविहीन, समतामूलक समाज का निर्माण करना अत्यंत जरूरी है। राजनीतिक लोकतंत्र के साथ-साथ आर्थिक एवं सामाजिक लोकतंत्र भी अत्यंत जरूरी है।

संविधान, लोकतंत्र एवं समतामूलक भारत के बारे में डॉ.अम्बेडकर के विचार

गुलामगिरी जैसी मुक्तिगामी प्रसिद्ध रचना के लेखक, सत्यशोधक समाज के प्रवर्तक, क्रांतिकारी समाज सुधार महात्मा जोतिबा फुले को अपना गुरु मानने वाले डॉ.अम्बेडकर ने यूरोप के समाजवादी आंदोलन के नारे "Educate, Agitate and Organize" को अपने जीवन संघर्ष का प्रेरणदायी नारा बनाया। जाति को जिंदा रखने की नहीं बल्कि इसके समूल नाश (Annihilation of Caste) पर जोर दिया, इसलिए कि जाति एक ऐसी सामाजिक संस्था है जो समानता की विरोधी है, मानव अधिकारों की विरोधी है, राष्ट्र एवं लोकतंत्र विरोधी है। जाति विकास की विरोधी है। जाति में गर्व करने लायक कुछ भी नहीं है।

1938 में मिल मजदूरों के हितों के लिए बाबा साहेब ने कम्युनिस्टों के साथ मिलकर आंदोलन किया। पूंजी और पूंजीपति में अंतर बताते हुए बाबा साहेब ने कहा कि "देश में पूंजी तो बढ़नी चाहिए, मगर पूंजीपति नहीं।" अम्बेडकर बीमा कंपनियों, उद्योग-धंधों एवं कृषि के राष्ट्रीयकरण के प्रबल समर्थक थे।

बाबा साहेब कहा करते थे कि "वह हिंदू पैदा हुए हैं, क्योंकि यह उनके वंश में नहीं था, लेकिन वे हिन्दू मरेंगे नहीं।" अम्बेडकर का पुरजोर मानना था कि जाति आधारित हिंदू समाज में दलितों की मुक्ति संभव नहीं है। लिहाजा स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व की भावना का पोषक बौद्ध धर्म ने उन्हें सबसे ज्यादा पसंद आया। 1956 में अम्बेडकर लाखों अनुयायियों के साथ बौद्ध बन गए। डॉ.अम्बेडकर ने ब्राह्मणवाद एवं पूंजीवाद दोनों को गरीब विशेषकर दलितों का मुख्य दुश्मन बताया। लेकिन ब्राह्मणवाद से अम्बेडकर का तात्पर्य जाति से किसी व्यक्ति के ब्राह्मण परिवार में पैदा होने से नहीं था। बल्कि ऐसी ऐसी विचारधारा में यकीन करने से था जो स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व के मूल्यों को नकारती है। ऐसा व्यक्ति चाहे गैर ब्राह्मण ही क्यों ना हो!

'राज्य और अल्पसंख्यक: उनके अधिकार क्या हैं और उन्हें स्वतंत्र भारत के संविधान में कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है' विषय पर अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिषद की ओर से संविधान सभा में डॉ.अम्बेडकर द्वारा 1947 में प्रस्तुत किया गए अनुसूचित जातियों के सुरक्षा उपायों से संबंधित ज्ञापन की प्रस्तावित उद्देशिका में 'सुविधा-वंचित वर्गों को बेहतर अवसर सुलभ कराते हुए सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक विषमता को दूर करने' पर जोर दिया गया। 'राज्य एवं अल्पसंख्यक' नामक इस महत्वपूर्ण रचना के जरिए डॉ.अम्बेडकर ने अपने आर्थिक विचार प्रकट करते हुए दलितों एवं मेहनतकशों के आर्थिक विकास के लिए कृषि, बीमा, उद्योग सहित 'आर्थिक जीवन के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राजकीय समाजवाद' अपनाते पर जोर दिया। "राजकीय समाजवाद की

स्थापना विधानमंडल की इच्छा पर निर्भर नहीं करेगी। राजकीय समाजवाद की स्थापना संवैधानिक विधि द्वारा होगी और इस प्रकार उसे विधायिका और कार्यपालिका के किसी कृत्य से बदला नहीं जा सकेगा।" डॉ.अंबेडकर ने लिखा है कि "भारत का तेजी से उद्योगीकरण करने के लिए राजकीय समाजवाद अनिवार्य है। निजी उद्यम ऐसा नहीं कर सकता और यदि कर सकता है तो भी वह संपदा की विषमताओं को जन्म देगा, जो पूंजीवाद ने यूरोप में पैदा की है और जो भारतीयों के लिए एक चेतावनी होगी।"

डॉ.अंबेडकर ने यह भी कहा है कि गरीब भूखे, गरीब एवं बेरोजगार व्यक्ति के लिए मौलिक अधिकार एवं स्वाधीनता का कोई खास मतलब नहीं है। यदि उसकी मौलिक जरूरतें ही सरकार द्वारा पूरी नहीं की जाएं। अंबेडकर लिखते हैं कि राज्य के हस्तक्षेप के बिना स्वाधीनता की बात करना आमजन के लिए कोरी कल्पना है क्योंकि यह स्वाधीनता असल में "जमींदारों को लगान बढ़ाने, पूंजीपतियों को कार्य के घंटे बढ़ाने और मजदूरी घटाने की स्वाधीनता है।...असल में अंबेडकर की चिंता थी कि 'जिसे राज्य के नियंत्रण से मुक्ति कहते हैं, वही प्राइवेट नियोजक के एकाधिकार का दूसरा नाम है।"

भारत में लोकतंत्र की सफलता के लिए आसन्न चुनौतियां एवं खतरों के बारे में डॉ.अंबेडकर की चेतावनियां (संविधान सभा में 25 नवंबर 1949 के दिन डॉ.अंबेडकर के समापन भाषण के विशेष संदर्भ में)

संविधान तैयार हो जाने पर बाबा साहेब डॉ.अंबेडकर ने संविधान सभा में 25 नवंबर 1949 के दिन अपने समापन भाषण में जोर देते हुए कहा है कि दलित एवं अन्य वंचित वर्ग की प्रगति एवं समतामूलक भारत के निर्माण के लिए सिर्फ राजनीतिक लोकतंत्र ही नहीं बल्कि सामाजिक एवं आर्थिक प्रजातंत्र भी बेहद जरूरी है। अर्थात् जाति एवं जेंडर आधारित भेदभाव एवं उत्पीड़न भी दूर किया जाए। आर्थिक विषमता कम की जाए। साथ ही राजनीति में नायक पूजा का भी कड़ा विरोध किया है। डॉ.अंबेडकर ने कहा है कि "धर्म में भक्ति, आत्मा के उद्धार का मार्ग हो सकती है। लेकिन राजनीति में भक्ति या नायक की पूजा, पतन और अंततः तानाशाही के लिए एक निश्चित मार्ग सुनिश्चित करती है।"

प्रजातंत्र को बनाए रखने के लिए डॉ.अंबेडकर ने लोगों को सचेत किया कि "अपनी स्वतंत्रता को एक महानायक के चरणों में भी समर्पित ना करें या उस पर विश्वास करके उसे इतनी शक्तियां प्रदान न कर दें कि वह संस्थाओं को नष्ट करने में समर्थ हो जाए।...उन महान व्यक्तियों के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने में कुछ गलत नहीं है, जिन्होंने जीवन पर्यंत देश की सेवा की हो। परंतु कृतज्ञता की भी कुछ सीमाएं हैं।... इसलिए अंबेडकर सावधानी की जरूरत बताते हुए आगे लिखते हैं कि... यह सावधानी किसी अन्य देश के मुकाबले भारत के मामले में अधिक आवश्यक है, क्योंकि भारत में भक्ति या नायक पूजा उसकी राजनीति में जो भूमिका अदा करती है, उस भूमिका के परिणाम के मामले में दुनिया का कोई देश भारत की बराबरी नहीं कर सकता। धर्म के क्षेत्र में भक्ति आत्मा की मुक्ति का मार्ग हो सकता है, परंतु राजनीति में भक्ति या नायक पूजा पतन और अंततः तानाशाही का सीधा रास्ता है।"

डॉ.अंबेडकर 25 नवम्बर 1949 के इसी भाषण के जरिये हमें सचेत करते हैं कि भारत में राजनीतिक प्रजातंत्र की कायम होने से ही काम नहीं चलेगा। वह चाहते थे कि राजनीतिक प्रजातंत्र को सामाजिक प्रजातंत्र भी बनाना होगा और सामाजिक प्रजातंत्र का मतलब है... एक ऐसी जीवन पद्धति है जो स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को जीवन के सिद्धांतों के रूप में स्वीकार करती है।

डॉ.अंबेडकर का यह भी पुरजोर मानना था कि जो समाज अपनी महिलाओं को पीछे छोड़ देता है, वह समाज कभी भी प्रगति नहीं कर सकता। अंबेडकर ने महिला शिक्षा एवं स्वतंत्रता पर भी बहुत जोर दिया। हिन्दू महिलाओं को संपत्ति में हिस्सा दिला कर महिलाओं की स्थिति को उन्नत करने के लिए डॉ.अंबेडकर ने हिंदू कोड बिल तैयार किया, जो कांग्रेस के दक्षिणपंथी खेमे के दबाव के कारण पारित नहीं हो सका।

अल्पसंख्यकों के बारे में राज्य सभा में 2 सितंबर 1953 को बहस के दौरान अंबेडकर ने कहा था कि-

"लोग कहते हैं कि मैंने संविधान बनाया है, लेकिन मैं पहला व्यक्ति होऊंगा जो इसे जलाने को तैयार होगा। मुझे लगता है कि यह हर व्यक्ति के लिए अनुकूल नहीं है। लेकिन, जो भी है अगर लोग इसे अपनाए रखना चाहें तो उन्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि बहुमत के साथ अल्पसंख्यक भी होते हैं और आप यह कहकर अल्पसंख्यकों की आवाज़ नहीं दबा सकते कि 'आपकी आवाज़ को तबज्जो देने से लोकतंत्र को नुकसान होता है'। मुझे कहना है कि अल्पसंख्यकों को नुकसान पहुंचाने से सबसे बड़ा नुकसान होता है।"

बाबा साहेब के अथक परिश्रम से तैयार भारतीय संविधान की दृष्टि से देखा जाए तो भारत में लोकतंत्र अर्थात् सही मायने में जो शासन ऐसा हो जो अपने नागरिकों के लिए गरिमामय जीवन (Right to Life with Dignity) के लिए

अनुकूल हालत बना सके। देश की एकता अखंडता को खतरा नहीं हो। आर्थिक विषमता नहीं बढ़े। बेरोजगारी से युवा और महंगाई से आमजन परेशान नहीं हो। जाति, जेंडर एवं जनजाति, क्षेत्र, प्रांत के आधार पर भेदभाव नहीं हो। अल्पसंख्यकों को धर्म के नाम नफरत और हिंसा का शिकार नहीं बनाया जाए। दंगाई बस्तियां नहीं उजाड़े....

इसके लिए अत्यंत जरूरी हैं और वे हैं...Socialism, Secularism, Social Justice, Federalism and People Oriented Independent Foreign Policy.

आजादी के 75 वर्ष और भारतीय लोकतंत्र के समक्ष वर्तमान चुनौतियां

गौरतलब है कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना सहित नेताओं के भाषणों में स्वतंत्रता, समानता, न्याय एवं समाजवाद की बातें तो जमकर होती रही हैं। 'आम आदमी' के नाम की सरकार चली। 'अच्छे दिन' लाने का वादा वाली भी सरकार चल रही है। लेकिन हकीकत में स्थिति आज भी बहुत अच्छी नहीं है। अपने समय के बेहतरीन अर्थशास्त्री रहे डॉ. अम्बेडकर की नीतिगत सलाह की घोर अनदेखी कर 1947 से बाद से ही भारत में 'राज्य समाजवाद' के स्थान पर 'राज्य पूंजीवाद' (जिसे 'बुर्जुआ सोशलिज्म' भी कहा गया है) की अर्थनीति लागू की गई। पूंजीवादी वैश्वीकरण की नीतियों के कारण उच्च तकनीकी का इस्तेमाल कर प्राकृतिक एवं मानव संसाधनों के बेरहमी से दोहन कर भारत में भी आर्थिक वृद्धि दर जरूर तेज रही है लेकिन यह असमान एवं असंतुलित भी रही है... 'बड़ा भया तो क्या भया, जैसे पेड़ खजूर। पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर'...वाली स्थिति रही है। अर्थात् उच्च आर्थिक वृद्धि दर का लाभ आमजन को नहीं मिला।

भारतीय लोकतंत्र विषमता, भेदभाव एवं वैमनस्य की चुनौतियों से बुरी तरह घिर गया है। भारत में तंत्र गणविहीन सा हो गया है। जनतंत्र तेजी से धनतंत्र में तब्दील हो गया है। राजनीति में जातिबल एवं बाहुबल का भी बोलबाला है। भारत में जनतंत्र की मजबूती के लिए स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व, न्याय, लोकतंत्र, धर्मिरपेक्षता, समाजवाद एवं स्वतंत्र विदेशनीति के संवैधानिक मूल्यों का संवर्धन बहुत जरूरी है लेकिन शासकों के साम्राज्यवाद, सामंतवाद एवं जाति, सम्प्रदाय परस्त रवैये के कारण इन संवैधानिक मूल्यों की घोर अनदेखी होती रही है। राजनीतिक निरंकुशता बढ़ती गई इनसे गणतंत्र कमजोर हुआ है।

संविधान लागू हुए 70 साल से ज्यादा हो गए हैं। संविधान तो औपचारिक तौर पर बहुत अच्छा है, लेकिन आजादी के बाद से 1990 तक भारत में आर्थिक विकास की जो रणनीति लागू की गई, वह सरकार संचालित 'राज्य पूंजीवाद' की नीति थी। हालांकि लोककल्याण को भी स्थान दिया गया। गरीबी हटाने व समाजवाद की भी बातें खूब हुईं। फिर भी आर्थिक विषमता बढ़ती ही गई। एक किस्म का "बुर्जुआ सोशलिज्म" ही पनपा। 1991 से आर्थिक सुधार के नाम लागू की गई बाजारवादी नीतियों से आधुनिक तकनीक एवं संचार के साधनों के उपयोग से आर्थिक वृद्धि दर तो तेज हुई लेकिन यह वृद्धि दर असमान व असंतुलित रही। विषमता, बेरोजगारी एवं भ्रष्टाचार ही ज्यादा बढ़ा। शिक्षा एवं स्वास्थ्य का व्यावसायीकरण बढ़ा। आमजन के लिए शिक्षा व स्वास्थ्य महंगी होती गई। कृषि क्षेत्र में सरकारी निवेश में कटौती किये जाने से खेती का संकट गहराता गया। खेती घाटे का व्यवसाय होने के कारण एवं कर्ज में डूब जाने के कारण लाखों किसान आत्महत्या कर चुके हैं।

अच्छे दिन लाने का वादा कर सत्ता में आई केंद्र सरकार ने मजदूर विरोधी और किसान विरोधी कानून थोप दिए। इसीलिए अन्रदाता किसान को मजबूरन सड़कों पर आना पड़ा। जन विरोधी 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020' को भी मनमाने तरीके से लागू किया जा रहा है। इस नीति का छात्र, शिक्षक एवं अभिभावक वर्ग कड़ा विरोध कर रहा है। कारपोरेट परस्त नीतियों से पर्यावरण का भी भारी नुकसान हुआ है। अपराध भी बढ़े। जाति, जेंडर एवं धर्म के नाम पर भेदभाव, वैमनस्य व हिंसा भी बढ़ी है। सांप्रदायिकता बढ़ी है। राजनीति में धनबल हावी हो जाने से गणतंत्र भी तेजी से कमजोर होता गया।

हम आजादी का अमृत महोत्सव भी मना रहे हैं, हकीकत यह है कि आज भी हम समतामूलक भारत तो नहीं बना पाए। भारत विश्व की पांचवी अर्थव्यवस्था है। लेकिन मानव विकास सूचकांक में इंडिया 131वें पायदान पर है। ग्लोबल हंगर इंडेक्स की 117 देशों की सूची में भारत का स्थान 101वां है। वर्ल्ड इकोनामिक फोरम की 'ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट 2022' के अनुसार लैंगिक समानता की दृष्टि से भारत का स्थान 146 देशों की सूची में 135वां है। वर्ल्ड प्रेस फ्रीडम इंडेक्स की 180 देशों की सूची में 2021 में इंडिया का स्थान 142वां है। डेमोक्रेसी इंडेक्स में 167 देशों की सूची में भारत का स्थान 53वां है।

आर्थिक विषमता, बीमारी एवं गरीबी की वैश्विक चुनौतियों पर तथ्यपरक, विश्वनीय अध्ययन के लिए प्रसिद्ध सामाजिक संस्था 'ऑक्सफैम' की 2022 की रिपोर्ट बताती है कि आर्थिक विषमता तेजी से बढ़ी है। भारत की सबसे

अमीर एक प्रतिशत आबादी अब तक 40 प्रतिशत दौलत की मालिक बन चुकी है। दरिद्रीकरण इतना तेजी से बढ़ा है कि नीचे की 50 प्रतिशत आबादी के पास सिर्फ 3 प्रतिशत दौलत ही रह गई है। कोरोना महामारी में भी अरबपतियों की दौलत 121 प्रतिशत बढ़ी है। भुखमरी के शिकार लोगों की संख्या 19 करोड़ से बढ़कर 35 करोड़ पहुंच चुकी है।

करोड़ों लोग शिक्षा एवं स्वास्थ्य की बुनियादी सेवाओं से वंचित हैं।

बेरोजगारी बढ़ी है। हरियाणा में 37 प्रतिशत के बाद 28 प्रतिशत के साथ बेरोजगारी में राजस्थान का स्थान दूसरा है। देश में 40 प्रतिशत से ज्यादा शिक्षित युवा बेरोजगार हैं। बेरोजगारी के चलते युवा आत्महत्या करने पर आमादा है। कच्चा तेल सस्ता है फिर भी पेट्रोल, डीजल, रसोई गैस महंगे हैं।

जाति, जेंडर आधारित भेदभाव आज भी कायम है। धर्म के नाम बढ़ती नफरत और हिंसा से हम सब चिंतित हैं। दलित और महिलाओं पर हमले आज भी हो रहे हैं। एनसीआरबी के आंकड़ों के विश्लेषण के मुताबिक वर्ष 2001 से 2021 के 20 वर्ष में दलितों के खिलाफ अपराध और अत्याचारों में 51 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। देश में प्रतिदिन 140 दलित उत्पीड़न के शिकार होते हैं। प्रतिदिन 3 दलितों की हत्या होती है। प्रतिदिन 11 दलित महिलाओं के साथ दुष्कर्म होते हैं। पिछले 10 वर्षों में महिला उत्पीड़न के मामलों में राजस्थान में 93 प्रतिशत से ज्यादा की वृद्धि हुई है। प्रतिदिन 140 दलित उत्पीड़न के शिकार होते हैं। प्रतिदिन 3 दलितों की हत्या होती है। प्रतिदिन 11 दलित महिलाओं के साथ दुष्कर्म होते हैं। प्रतिदिन 42 दलितों के साथ मारपीट कर चोट पहुंचाई जाती है जिनमें जानलेवा हमले भी हैं। यह हाल तो तब है जब बड़ी संख्या में दलितों के साथ अत्याचार की रिपोर्ट थानों में जल्दी से दर्ज ही नहीं की जाती। बड़ी तादाद में एफआर कर मुकदमें झुंठे बता दिए जाते हैं, जिससे पीड़ित निराश होते हैं। उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और राजस्थान इन 3 राज्यों में अकेले 55 प्रतिशत दलित अत्याचार घटना घटित हुई हैं। सभ्य समाज के लिए बड़े शर्म की बात तो यह है कि दलित महिलाओं के साथ बलात्कार की घटनाओं में पिछले 20 वर्षों में 196 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। दलित महिलाओं के साथ रेप की घटनाओं में राजस्थान का स्थान प्रथम है। सरकारी कार्यालयों में भी जातिगत भेदभाव बढ़ रहा है।

नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो की रिपोर्ट 'क्राइम इन इंडिया 2021' के मुताबिक वर्ष 2019 में राष्ट्रीय स्तर पर 7570, वर्ष 2020 में 8272 एवं वर्ष 2021 में 8802 आदिवासियों के खिलाफ अपराध के मुकदमे दर्ज हुए। 2627 अपराधों के साथ मध्यप्रदेश प्रथम, 2121 की संख्या के साथ राजस्थान दूसरे एवं 676 अपराधों के साथ मध्यप्रदेश तीसरे स्थान पर है। वर्ष 2019 से 2021 के 3 वर्षों में आदिवासियों के खिलाफ अपराध दर राष्ट्रीय स्तर पर 16.74 प्रतिशत है। मध्य प्रदेश में 36.6 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ में 18.5 प्रतिशत, राजस्थान में 18.03 प्रतिशत, उड़ीसा में 17.36 प्रतिशत है। वर्ष 2001 में आदिवासियों के विरुद्ध अपराधों की संख्या 6217 से बढ़कर 2021 में 8802 हो गई। हत्या के प्रकरण 19 प्रतिशत बढ़े। रेप की घटनाएं 131 प्रतिशत बढ़ी। बलात्कार की घटनाएं 2001 में 573 से बढ़कर 2021 में 1324 हो गई। आदिवासियों को उनकी जमीन से बेदखल करने के राष्ट्रीय स्तर पर सिर्फ 37 प्रकरण दर्ज हुए। आदिवासियों की शिकायतों में चार्जशीट दाखिल करने की दर राष्ट्रीय स्तर पर 80.4 प्रतिशत है। आदिवासी जल, जंगल और जमीन के पुश्तैनी हकदार है। इनकी आबादी 2011 की जनगणना के मुताबिक देश की आबादी की 8.5 प्रतिशत है। राजस्थान में 13.5 प्रतिशत आबादी आदिवासी है। आदिवासियों के अधिकार, कल्याण एवं उन्नति के लिए संवैधानिक प्रावधान हैं। शिक्षा एवं रोजगार के लिए अनेक सरकारी योजनाएं चल रही हैं। एसटी सब प्लान है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम भी बना हुआ है।

क्यों नहीं बना पाए समतामूलक समाज?

'जैसा बोया है, वैसा ही तो काटेंगे' अर्थात् "बोए पेड़ बबूल का तो आम कहां से होय।" ...यह बात तो दुरुस्त है कि आजादी के बाद देश में एक बेहतर संविधान बना। अस्पृश्यता भेदभाव को कानूनी तौर पर खत्म करने वाले कानून भी बने। राजनीतिक अधिकार भी मिले। लेकिन पूंजीवादी आर्थिक विकास के कारण समाज में विषमता तेजी से बढ़ती रही। "Growth with Equity" की बातें हुईं। समाजवाद की भी खूब बातें हुईं। लेकिन असल में पूंजीवाद ही पनपा है।

इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब-जब भी इस धरती पर जुल्म बढ़ा है, तो जुल्म के खिलाफ शोषित, पीड़ित आमजन ने जंग लड़ी है, जिसमें जीत भी मिली है, जिसका नेतृत्व करने वाले नायक का नाम इतिहास के अमिट अक्षरों में अंकित हुआ है। यह भी हकीकत है कि जुल्म, ज्यादाती के खिलाफ आवाज उठाने के लिए इंसान को कई

बार यातनाएं भी मिली हैं, कुर्बानियां भी देनी पड़ी हैं लेकिन इस सबकी बदौलत ही दुनिया में क्रांतियां हुई हैं, बदलाव आया है। बुनियादी बदलाव सिर्फ सत्ता में भागीदारी से नहीं आता, क्योंकि पूंजीवादी, सामंती समाज में सत्ता का स्वरूप तो विषमतामूलक और वर्चस्ववादी ही होता है।

बुनियादी बदलाव बिना बदनामी और बलिदान के संभव नहीं है...Representation is not Enough, Revolution is a Must...बुनियादी बदलाव के लिए समर्पित, संघर्षशील अगुआ व्यक्ति को दैवीय बनाकर "मसीहा, महामानव" कहना या भगवान बना देना निरीह अज्ञानता, विज्ञान विरोधी, जनविरोधी सोच है। इससे समाज में जड़ता और रूढ़िवादिता मजबूत होती है। जनसंघर्ष को कमतर कर दिया जाता है। इंसान जन्म से नहीं, कर्म से बड़ा बनता है। परिस्थितियां उसे महान बनने का अवसर प्रदान करती हैं। जन साधारण के बीच से यदि कोई जनता के दुख दर्द को ठीक से समझे, जनता के हक और अधिकारों के लिए सार्थक और साझा प्रयास करे, भ्रष्ट और लालची नहीं बने, बदनामी सहन कर सके, जरूरत पड़ने पर बलिदान दे सके तो वह व्यक्ति जरूर महान बनता है, दुनिया में नाम कमाता है।

यह भी गौरतलब है कि किसी नायक की व्यक्ति पूजा (Hero Worship) करना भी उचित नहीं है जैसा बाबा साहेब ने भी कहा है क्योंकि इससे तानाशाही पनपती है, मिथ्या अवतारवाद को बढ़ावा मिलता है। आमजन में जनसंघर्ष के प्रति उदासीनता पनपती है। फुले, अंबेडकर, भगतसिंह जैसे क्रांतिकारी नायकों ने ईश्वर, अल्लाह के आदेश से नहीं, बल्कि अपने समय की परिस्थितियों को इंसान की बेहतरी के लिए बदलने की कोशिश हेतु अपने ज्ञान, विवेक का बेहतरीन इस्तेमाल किया था, संगठन बनाकर क्रांतिकारी बदलाव के प्रयास किए थे।

भारत को समतामूलक, शोषणमुक्त समाज बनाने के लिए आर्थिक शोषण के साथ-साथ जातिगत भेदभाव और शोषण से भी मुक्ति अत्यंत जरूरी है। साथ ही महिलाओं के साथ भेदभाव, धर्म के नाम अल्पसंख्यकों के प्रति नफरत के खिलाफ भी बोलना जरूरी है। क्योंकि वोट की खातिर हिंदू-मुसलमान के बीच भड़काए दंगों में दलितों का इस्तेमाल बड़े स्तर पर होता है, दलितों में भी वाल्मीकि जैसी सबसे पिछड़ी दलित जाति का। चिंता की बात है कि जाति विशेष की आए दिन हो रही "पंचायतों" ने समाज में कट्टरता, ध्रुवीकरण और अपराधीकरण को बढ़ाया है जिससे समाज में संवादहीनता की स्थिति बन गई है। रोजी-रोटी के लिए साझा संघर्ष स्थिति नहीं बन पा रही है।

खास चिंता की बात यह है कि समतामूलक भारत बनाने के लिए मार्गदर्शक हमारे समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष संविधान और लोकतंत्र पर हमले तेज हो रहे हैं। ये हमले मुख्यतः पूंजीपति हितैषी, जाति एवं जेंडर आधारित विषमता एवं वर्चस्व अर्थात् मनुवाद की पोषक, सत्ता द्वारा संरक्षित सांप्रदायिक राजनीति एवं विचारधारा द्वारा किए जा रहे हैं। इसलिए इन हमलों के खिलाफ एकजुट होकर आवाज उठाना भी हमारा आज का परम नागरिक कर्तव्य है।

संदर्भ सूची

1. Subhash C. Kashyap; Our Constitution, NBT 2021
2. Adam Smith, An Inquiry into the Nature and Causes of the Wealth of Nations, 1776
3. John Maynard Keynes, General Theory of Employment, Interest and Money: with The Economic Consequences of the Peace,
4. बी आर अंबेडकर, राज्य और अल्पसंख्यक: उनके अधिकार क्या हैं और उन्हें स्वतंत्र भारत के संविधान में कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है
5. नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो रिपोर्ट 'क्राइम इन इंडिया 2021
6. Oxfam International Report 2023 "Survival of the Richest"